इकाई- 7 ***संक्षेपण***

पाठ-संरचना

7.0	*उद्देश्य*
7.1	*परिचय*
7.2	*संक्षेपण का स्वरूप एवं विशेषताएँ*
7.3	*संक्षेपण के प्रदर्श*
7.4	*सारांश*
7.5	*अभ्यास के प्रश्न*
7.6	*पठनीय ग्रंथ*

७.० उद्देश्य

संक्षेपीकरण का उद्देश्य छात्रों में अपने विचारों को स्पष्टता के साथ-साथ कम से कम शब्दों में अभिव्यक्त करने की क्षमता को विकसित करना है। संस्कृत भाषा समासशैली के लिए विख्यात है, क्योंकि इसमें लम्बे-लम्बे समस्त पदों का प्रयोग होता हैं,परन्तु इसके साथ ही अलंकारों का भी प्रयोग बहुत होता है। नखशिख वर्णन की परम्परा संस्कृत साहित्य की विशेषता रही है। अतः संस्कृत में छात्रों के लिए संक्षेपण का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

७.१. परिचय

संक्षेपण किसी परिच्छेद या गद्यांश का संक्षिप्त, क्रमबद्ध एवं स्वतःपूर्ण पुनर्लेखन है। संक्षेपण के लिए यह आवश्यक है कि मूल अनुच्छेद को दो तीन बार पढ़कर अच्छी तरह समझ लेना चाहिए। मुख्य-बिन्दुओं को सर्वप्रथम क्रमबद्ध कर लेना चाहिए। मुख्य बिन्दुओं को लिखने के अनन्तर गौण बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। परिच्छेद का कोई भी मुख्य बिन्दु संक्षेपण में छूटना नहीं चाहिए। भाषा सरल, सुसम्बद्ध एवं चुस्त रहनी चाहिए। विचारों के लेखन में अन्विति का अभाव नहीं रहना चाहिये। अलंकारों एवं अनावश्यक विस्तार से बचना चाहिए। संक्षेपण में अन्य पुरुष, परोक्ष कथन तथा भूतकाल का प्रयोग नहीं करना चाहिए। भाषा सरल तथा वाक्य छोटे-छोटे रहने चाहिए तथा यथासम्भव मुहावरों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

७.२. संक्षेपण का स्वरूप एवं विशेषताएँ

संक्षेपण जिसे अंग्रेजी में Precis कहते हैं, फ्रेंच शब्द जिसका उच्चारण Pressee होता है, से सम्बद्ध है। संक्षेपण का अर्थ है छोटा करना। किसी विस्तृत विवरण, वक्तव्य,

पत्रव्यवहार या लेख के तथ्यों और निर्देशों के ऐसे संयोजन को संक्षेपण कहते हैं, जिसमें अप्रासङ्गिक असम्बद्ध, पुनरावृत्त, अनावश्यक बातों का त्याग और सभी अनिवार्य, उपयोगी तथा मूल तथ्यों का प्रवाहपूर्ण संक्षिप्त संकलन हो।

इसके अनुसार संक्षेपण एक स्वतः पूर्ण रचनांश है, जिसमें किसी अनुच्छेद के मुख्य विषय को न्यूनतम शब्दों में लिखा जाता है। इसमें स्पष्टता तथा उद्धृत अनुच्छेद की मुख्य बातें होनी चाहिए। उसे पढ़ लेने के पश्चात् मूल विस्तृत सन्दर्भ को पढ़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती। वस्तुतः संक्षेपण में लम्बे चौड़े विवरण, पत्राचार आदि की समस्त बातों को समास शैली में अत्यन्त संक्षिप्त एवं क्रमबद्ध रूप में लिखा जाता है। समास शैली का तात्पर्य किसी विचार को थोड़े से शब्दों में प्रस्तुत करना है। कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक विचारों, भावों और तथ्यों को प्रस्तुत करना ही समास शैली की विशेषता है। संक्षेपक इसी समास-शैली का आश्रय लेकर मूल की समस्त आवश्यक बातों को चुन लेता है तथा अनावश्यक बातों को छांटकर सरल शब्दों में मूल तथ्यों को अपनी सरल एवं परिष्कृत भाषा में प्रस्तुत करता है। वस्तुतः संक्षेपण किसी बड़ी रचना का संक्षिप्त संस्करण, बड़ी मूर्ति का लघु रूप और बड़े चित्र का छोटा चित्रण है। दूसरे शब्दों में संक्षेपण वह रचना रूप है, जिसमें समास-शैली के माध्यम से किसी रचना का सारतत्त्व लगभग एक तिहाई शब्दों में उपस्थित किया जाता है।

संक्षेपण की उपयोगिता पढ़ने की दृष्टि से भी है। यह हमें ग्रहणशील पाठक बनाता है। हमारी विवेक शक्ति विकसित करता है, चिन्तन को परिष्कृत तथा असम्बद्ध एवं अनर्गल वर्णनों से बचाता है। इससे पाठक के श्रम एवं समय की बचत होती है। यह एक मानसिक अनुशासन है। पढ़ने की दृष्टि से ही नहीं, अपितु लिखने की दृष्टि से भी संक्षेपण का महत्त्व है। संक्षेपण में कुशल व्यक्ति अपने विचारों को स्पष्टता, संक्षिप्तता तथा प्रभावोत्पादकता के साथ प्रकट कर सकता है। संक्षेपण में स्पष्टता तथा तारतम्य का अभाव नहीं होना चाहिए। जैसा कि कहा गया है, उसमें पुनरावृत्ति भी नहीं होनी चाहिए। अपने अभिप्राय को न्यूनतम शब्दों में व्यक्त करने की क्षमता इससे प्राप्त होती है। संक्षिप्तता को शैली का गुण माना गया है। संस्कृत वाङ्मय का अत्यन्त विशाल भण्डार सूक्तियों, सुभाषितों एवं सूत्रों से भरा पड़ा है। पाणिनिकृत अष्टाध्यायी, पतंजलि का योगसूत्र आदि सभी ग्रन्थों में सूत्रशैली दृष्टिगत होती है। वस्तुतः संक्षिप्तता ही वाग्विदग्धता की आत्मा है।

कुशल संक्षेपक के गुणः

किसी भी कार्य को अच्छी तरह कर सकने के लिए कर्ता में कुछ गुण अपेक्षित हैं। संक्षेपण एक श्रमसाध्य कार्य है, अतः उस पर निपुणता प्राप्त करने के लिए धैर्य, लगन एवं परिश्रम की आवश्यकता है संक्षेपक के अनिवार्य गुण इस प्रकार हैं-

१. **सावधानता**-कुशल संक्षेपक होने के लिए सावधानता अनिवार्य गुण है। संक्षेपीकरण के लिए आवश्यक है कि संक्षेपण कर्ता किसी भी अवतरण के भावों एवं विचारों को स्पष्ट रूप से समझकर मुख्य विचारों को अपने स्मृतिकोष में सुरक्षित रखे। कोई भी मुख्य बिन्दु छूटना नहीं चाहिए।

२. **शीघ्र निर्णय लेने की क्षमता**—कुशल संक्षेपक में अवतरण के अध्ययन क्रम में ही महत्त्वपूर्ण अंशों को ग्रहण तथा व्यर्थ की बातों को छांटने के निर्णय का गुण रहना आवश्यक है। कुशल संक्षेपक पढ़ते-पढ़ते ही अवतरण का संक्षिप्त रूप आत्मसात् कर लेता है। प्रत्युत्पन्नमति संक्षेपक अनेक शब्दों के लिए एक शब्द को शीघ्र ही चुन लेता है और उसके संक्षेपण में क्रमहीनता का दोष नहीं होता।

३. **तटस्थता**—तटस्थता का तात्पर्य है कि संक्षेपक संक्षेपण करते समय व्यक्तिगत विचारों, पूर्वाग्रहों एवं आलोचना से मुक्त रहे। उसे यथासम्भव दूसरों द्वारा लिखित विचारों को संक्षिप्त रूप में लिखना चाहिए। तटस्थता के लिए संयम एवं अभ्यास की आवश्यकता है।

४. **धैर्य**— संक्षेपण का कार्य समय-साध्य एवं श्रमसाध्य होने के साथ-साथ धैर्य की भी अपेक्षा रखता है। अवतरण को पढ़कर उसके मुख्य विचारों का संकलन, असम्बद्ध शब्दों को छांटना, शब्दों को गिनना, पुनः विविध प्रक्रियाओं के पश्चात् संक्षेपण का अंतिम प्रारूप तैयार कर पुनः शब्दों की गणना, एक शीर्षक देना आदि श्रमसाध्य तो है ही उसके साथ धैर्य की भी आवश्यकता होती है। यदि मूल अवतरण के शब्दों की गणना में गलती हो जाए, तो स्वाभाविक है कि संक्षेपण की शब्द संख्या में भी गलती हो जाएगी।

५. **स्पष्ट अभिव्यक्ति**—संक्षेपण में भावों की अभिव्यक्ति इतनी पारदर्शी एवं स्पष्ट होनी चाहिए कि पाठक अवतरण के गूढ़, दुरूह एवं क्लिष्ट विचारों को सरलतापूर्वक हृदयंगम कर सके। भाषा की प्राञ्जलता भी अपेक्षित है।

६. **सारगर्भित शब्दों का ज्ञान**— संक्षेपक का शब्द भण्डार विशाल होना चाहिए। जिस संक्षेपक को शब्द समूहों के लिए एक शब्द, पर्यायवाची शब्द, अनेकार्थी शब्द आदि का जितना अधिक ज्ञान होगा, वह संक्षेपण उतनी ही शीघ्रता एवं शुद्धता से साथ करने में समर्थ होगा। संस्कृत के विद्यार्थियों को कृदन्त, तद्धित, सन्नन्त, यङ्ङन्त, समासान्त पदों का ज्ञान रहना आवश्यक है। इनकी सहायता से वे सरलतापूर्वक निर्दोष संक्षेपण प्रस्तुत कर सकेंगे।

७. **स्मृति**-संक्षेपक की स्मृति तीव्र होनी चाहिए। किसी भाषण आदि के संक्षेपण में यदि वक्ता की ध्वनियों के उतार-चढ़ाव, उसकी मुखमुद्रा, शब्द, वातावरण की स्मृति रहे, तो संक्षेपण की अभिव्यक्ति जीवन्त रहेगी।

८. **अभ्यास**-अच्छे संक्षेपक के लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता है। नियमित लेखन से भाषा परिमार्जित एवं शैली सुसंघटित होती है। स्मरणशक्ति भी अभ्यास द्वारा उद्दीप्त होती है।

९. **नियम पालन**—सफल संक्षेपण के लिए संक्षेपक को नियमों का पालन कठोरता से करना आवश्यक है। संक्षेपण एक मानसिक अनुशासन है तथा नियमों का अनुपालन संक्षेपक की शैली को संयत, नियमित एवं चुस्त बनाता है।

अच्छे संक्षेपण में क्या होना चाहिए?

संक्षेपण एक प्रकार का मानसिक प्रशिक्षण है और मानसिक व्यायाम भी। उत्कृष्ट

संक्षेपण की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

१. **पूर्णता**–संक्षेपण मूल का अनुलेखन है तथा स्वतः पूर्ण रचनांश है। विचारों की दृष्टि से उसे 'अन्यूनं नातिरिक्तम्' होना चाहिए। अर्थात् मूल अवतरण का कोई मुख्य अंश छूटना नहीं चाहिए और न अपने विचारों को जोड़ना चाहिए।

२. **संक्षिप्तता**–संक्षिप्तता संक्षेपण का एक प्रधान गुण है। यद्यपि इसके आकार का निर्धारण और नियमन संभव नहीं है; तथापि संक्षेपण को सामान्यतया मूल का तृतीयांश होना चाहिए। अनावश्यक एवं अप्रासङ्गिक प्रसङ्ग, व्यर्थ विशेषण, दृष्टान्त, उद्धरण, व्याख्या और वर्णनों को छोड़ देना चाहिए।

३. **स्पष्टता**–संक्षेपण की अर्थव्यञ्जना स्पष्ट होनी चाहिए। मूल अवतरण का संक्षेपण ऐसा लिखा जाए जिसके पढ़ने से मूल सन्दर्भ का अर्थ पूर्णता एवं सरलता से स्पष्ट हो जाए। संक्षेपक को ध्यान रखना चाहिए कि पाठक के सम्मुख मूल सन्दर्भ नहीं रहता, अतः संक्षेपण में जो कुछ लिखा जाय, वह बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए।

४. **भाषा की सरलता**–संक्षेपण के लिए आवश्यक है कि भाषा सरल, प्राञ्जल एवं परिष्कृत हो। क्लिष्ट एवं समासबहुल भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए। भाषा सरल, सुस्पष्ट और आडम्बरहीन होनी चाहिए, अलंकृत नहीं।

५. **शुद्धता**–शुद्धता का अर्थ है व्याकरण सम्मत शुद्ध प्रयोग । भाषा व्याकरणोचित होनी चाहिए, टेलिग्राफिक नहीं। कोई भी शब्द प्रयोग ऐसा नहीं होना चाहिए, जो भ्रामक अथवा अस्पष्ट हो, जिनके अलग अर्थ भी लगाए जा सके।। इसके अतिरिक्त शुद्धता का यह भी अर्थ है कि संक्षेपण में वे ही तथ्य एवं विचार लिखे जाएं, जो मूल सन्दर्भ में हो।

६. **प्रवाह एवं क्रमबद्धता**–संक्षेपण में भाव और भाषा का प्रवाह एक आवश्यक गुण है। भाव क्रमबद्ध हो, उनमें अन्विति हो और भाषा प्रवाहपूर्ण हो। एक भाव दूसरे भाव से सम्बद्ध हों। उसमें तार्किक क्रमबद्धता रहनी चाहिए। सारांश यह कि संक्षेपण में तीन गुणों का होना बहुत आवश्यक है– (1) संक्षिप्तता (2) स्पष्टता (3) क्रमबद्धता

संक्षेपण के नियम–

यद्यपि संक्षेपण के लिए निश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते हैं तथापि अभ्यास के लिए कुछ सामान्य नियम निम्नलिखित है–

संक्षेपण के विषयगत नियम–

1. गद्यांश अथवा मूल सन्दर्भ को ध्यानपूर्वक दो तीन बार अर्थ समझते हुए पढ़ लेना चाहिए ताकि सम्पूर्ण भावार्थ स्पष्ट हो जाए।
2. मूल सन्दर्भ के भावार्थ को समझकर आवश्यक शब्दों, वाक्यों या वाक्यखण्डों को रेखाङ्कित कर लेना चाहिए। इन शब्दों या वाक्यों के चयन में विशेष सतर्कता

रखनी चाहिए। उन शब्दों या वाक्यों को ही रेखाङ्कित कीजिए, जिनका मूल सन्दर्भ से सीधा सम्बन्ध हो अथवा जिनका भावों और विचारों की अन्विति में विशेष सम्बन्ध हो।

3. क्योंकि संक्षेपण मूल सन्दर्भ का सार है, अतः इसमें आलोचना-प्रत्यालोचना नहीं करनी चाहिए, न हि अपनी ओर से मौलिक या स्वतन्त्र विचारों को जोड़ना चाहिए, लेकिन विषय के बिन्दुओं को अपनी भाषा में ही लिखना चाहिए।
4. संक्षेपण को अन्तिम रूप देने के पहले रेखाङ्कित वाक्यों के आधार पर एक प्रारूप तैयार कर लेना चाहिए फिर उनमें संशोधन करना चाहिए। संक्षेपक को मूल परिवर्तन की छूट है, किन्तु आवश्यक है कि विचारों का तारतम्य रहे, अन्विति दोष नहीं रहना चाहिए।
5. अंतिम रूपरेखा के पूर्व पुनः एक दो बार ध्यान से पढ़ना चाहिए। यदि शब्द संख्या पहले से निर्धारित हो, तो प्रयास करना चाहिए कि संक्षेपण में उस निर्देश का पालन किया जाए, अन्यथा उसे मूलसन्दर्भ का एक तिहाई होना चाहिए।
6. संक्षेपण को व्याकरण के सामान्य नियमों के अनुसार एक क्रम से लिखना चाहिए।
7. अन्त में संक्षेपण के भावों और विचारों के अनुकूल एक संक्षिप्त शीर्षक दे देना चाहिए। शीर्षक निर्धारित करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि शीर्षक सभी तथ्यों को समेटने की क्षमता रखे तथा कम से कम शब्दों वाला हो।

संक्षेपण के शैलीगत नियम

संक्षेपण का अर्थ मूल के विचारों का बिन्दु संकलन ही नहीं है, अपितु वह एक स्वतन्त्र रचना है, जिसकी अपनी शैली है। यह शैली आडम्बरविहीन होती है। उसमें अलंकारों का चमत्कार दृष्टगत नहीं होता । वह व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध एवं स्वयं में पूर्ण होती है। वह मूल सन्दर्य के सम्पूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति में समर्थ होती है तथा उसमें अभिधा की प्रधानता रहती है। चमत्कार एवं आडम्बरविहीनता के कारण संक्षेपण का पठन सरल एवं सुबोध होता है।

संक्षेपक की मुख्य समस्या होती है कि अनावश्यक शब्दों को कैसे हटाए। सबसे सरल उपाय है कि अनेक शब्दों के लिए एक शब्द का प्रयोग करना। इसके अतिरिक्त लम्बे लम्बे वाक्यों या शब्दों को भी हटाया जाता है, जिनके कारण शब्द विस्तार हो जाता है।

1. शब्दाधिक्य–जब मूल अवतरण में किसी भाव को या विचार को अभिव्यक्त करने के लिए आवश्यकता से अधिक शब्दों का प्रयोग किया गया हो तब शब्द ही नहीं लम्बे पूरे वाक्य को हटा दिया जाता है।
2. विचारावृत्ति–किसी विचार पर पाठक का ध्यान केन्द्रित करने के लिए कभी-कभी लेखक विचारों की आवृत्ति करने लगता है। शब्द भिन्न-भिन्न होते हैं, किन्तु अर्थ समान रहता है। इस प्रकार की आवृत्ति से भाषा में चमत्कार आता है तथा लेखक

के विषय ज्ञान, शब्द भण्डार एवं भाषा पर अधिकार का ज्ञान अवश्य होता है, किन्तु संक्षेपण में इसे दोष माना जाता है। संक्षेपक को वस्तुनिष्ठ शैली अपनानी चाहिए। यथा-अनावश्यक शब्दों का प्रयोग। कभी-कभी लेखक वाक्य में अर्थ की पूर्ण अभिव्यक्ति सामर्थ्य रहते हुए भी अनावश्यक शब्दों के प्रयोग के आकर्षण से स्वयं को मुक्त नहीं कर पाते । संक्षेपण में किसी अनावश्यक शब्द जिसमें मूल विषय पर प्रकाश नहीं पड़ता हो, हटा देना चाहिए।

वक्रता—वक्रता का तात्पर्य है किसी बात को घुमाफिरा कर कहना। स्पष्ट अभिव्यक्ति का आधार स्पष्ट चिन्तन है, किन्तु साहित्य के क्षेत्र में अभिव्यक्ति की वक्रता का विशेष अर्थ एवं महत्त्व है। संस्कृत साहित्य के सुप्रसिद्ध काव्यशास्त्री कुन्तक ने वक्रोक्ति को ही कविता का प्राण कहा है।

किन्तु वक्रता का आनन्द एक विशिष्ट पाठक वर्ग ही ले सकता है, अतः संक्षेपण में वक्रता त्याज्य है। वक्रता दो प्रकार की हो सकती है—1. विचारों की वक्रता एवं 2. अभिव्यक्ति की वक्रता।

मूल में प्राप्त विचारों की वक्रता को सावधानी से सरल करना होता है। वक्र विचारों को खोलकर अधिक सुलझे ढंग से लिखना चाहिए। अभिव्यक्ति की वक्रता के कई कारण हैं—शब्द, मुहावरे, अलंकार, वाक्य विन्यास। इन वक्रताओं को दूर करना संक्षेपण के लिए आवश्यक है। संक्षेपण का सबसे बड़ा गुण है स्पष्टता और वक्रता स्पष्टता के मार्ग में बाध क है। इसके कारण शैली में अनावश्यक विस्तार हो जाता है।

शब्द मोह एवं प्रदर्शन—कुछ लेखकों में अल्पप्रचलित, क्लिष्ट एवं अप्रचलित शब्दों के प्रदर्शन के प्रति विशेष अभिरुचि दृष्टिगत होती है। परिणाम यह होता है कि जिस बात को थोड़े शब्दों में कहा जा सकता है, उसके लिए अनेक शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कभी-कभी ऐसे अप्रचलित शब्दों का प्रयोग भी होता है, जिसका अर्थ स्पष्ट नहीं हो। कतिपय विद्वान लेखक वाग्जाल को ही विद्वत्ता का पर्याय मानते हैं, अतः अनावश्यक शब्द प्रयोग एवं विद्वत्प्रदर्शन के कारण शैली में विस्तार हो जाता है। संस्कृत में बाणभट्ट, सुबन्ध ु आदि के गद्य इसके उदाहरण हैं। संक्षेपक को न केवल कतिपय शब्द अपितु पूरी वाक्य रचना बदल देनी चाहिए।

सामान्य कथन— सामान्य कथन का तात्पर्य है कि जिस विषय, व्यक्ति या वस्तु के सम्बन्ध में लिखा जा रहा है, उसके सम्बन्ध में सीधे बात न कहकर ऐसे वाक्यों का प्रयोग करना, जो सामान्यतः दूसरों पर भी चरितार्थ हो सके। इससे लेखन में विस्तार होता है और स्पष्टता का अभाव हो जाता है। अतः इस प्रकार के लेखन से बचना चाहिए।

आलङ्कारिक प्रयोग— अलंकार काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धर्म हैं। 'काव्यशोभाकरान् धर्मान् अलङ्कारान् प्रचक्षते।' किन्तु संक्षेपण में इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए। क्योंकि इससे अनावश्यक विस्तार उत्पन्न होता है और शब्दों की संख्या बढ़ जाती है। अलंकारों में प्रमुख अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा, श्लेष तथा अतिशयोक्ति हैं। आलंकरिक प्रयोग हटा देने से शब्दों की संख्या घट जाती है। अतः संक्षेपीकरण के समय अलंकारों को हटा देना चाहिए।

संक्षेपण की प्रक्रिया

१. **वाचन**– संक्षेपण किसी गद्य खण्ड में अभिव्यक्त विचारों का सार संक्षेप है। सार ग्रहण करने के लिए मूल अनुच्छेद का सावधानीपूर्वक पठन प्रथम चरण है। अनुच्छेद कितनी बार पढ़ा जाए, यह मूल की भाषा और विद्यार्थी की योग्यता पर निर्भर करता है। सबकी बोधशक्ति या ग्रहणशक्ति समान नहीं होती, प्रायः तीन बार पढ़ना पर्याप्त होता है।

२. **मुख्य विचार– बिन्दुओं का संकलन**–द्वितीय चरण में अनुच्छेद के महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को रेखाङ्कित कर उन्हें पुस्तिका में 1, 2, 3 करके लिख लेना चाहिए। सरल अनुच्छेदों में प्रायः तीन से अधिक विचारबिन्दु नहीं रहते। संक्षेपण में आवश्यक नहीं कि जिस क्रम से मूल अनुच्छेद में विचार बिन्दु हो, उसी क्रम में संक्षेपण लिखा जाए । क्रम परिवर्तन यदि बदलना भी पड़े तो सर्वप्रमुख विचार प्रारम्भ में रखना चाहिए, किन्तु कभी-कभी अधिक प्रभावी और स्मरणीय बनाने के लिए उसे अन्त में भी रख दिया जाता है। अनुच्छेद के आकार - प्रकार से विचार बिन्दुओं की संख्या का निर्धारण नहीं किया जा सकता। कभी-कभी बड़े-बड़े अनुच्छेदों में थोड़े विचार और छोटे अनुच्छेदों में अनेक विचार बिन्दु मिल जाते हैं।

३. **शीर्षक चयन**–शीर्षक चयन में दो बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

(क) अनुच्छेद में व्यक्त विचारों के साथ उसका सामञ्जस्य हो और वह संक्षेपण के विचारों का संकेत दे सके ।

(ख) वह आकर्षक हो ।

शीर्षक के संकेत अनुच्छेद के प्रथम या अन्तिम वाक्य में मिल जाते हैं। इन्हें कुञ्जी वाक्य कहते हैं क्योंकि इनमें शीर्षकों की कुञ्जी छुपी रहती है।

४. **प्रारूप की तैयारी**–विचार बिन्दुओं के संकलन और शीर्षक चयन के पश्चात् संक्षेपण का प्रारूप बनाना चाहिए। संकलित प्रमुख बिन्दु के आधार पर प्रारूप बनाना चाहिए। इस सन्दर्भ में ध्यान रखना आवश्यक है कि यह प्रारूप संक्षेपक के शब्दों में रहना चाहिए न कि मूल के शब्दों में। प्रारूप बनाते समय एक विचार बिन्दु का दूसरे विचार बिन्दु के साथ सम्बन्ध का ध्यान रखना आवश्यक है। उनकी पारस्परिक संगति और उनका औचित्य भी विचारणीय है। प्रारूप अभीष्ट संक्षेपण तक पहुँचने में हमारी सहायता करता है।

५. **शब्द गणना**–प्रारूप के लिखित रूप देने के पूर्व मूल अवतरण के शब्दों को गिन लेना आवश्यक है। अंतिम संक्षेपण का आकार मूल का एक तिहाई होना चाहिए और प्रारूप आधे के लगभग। मूल की शब्द संख्या गिन लेनी चाहिए।

संक्षेपण में शब्दों की गणना भी एक समस्या है। संस्कृत में संधि, समास के कारण यह समस्या जटिलतर हो जाती है। इस दृष्टि में संक्षेपणकर्त्ता को मूल अवतरण की लेखा पद्धति को देखना चाहिए। यदि सामासिक शब्दों में योगरेखा हो तो अलग-अलग शब्द मानने चाहिए। अक्षरों की गिनती नहीं की जाती है, शब्दों की गणना करनी चाहिए। संख्याओं को लेकर भी कठिनाई होती है जैसे एकोनविंशति, आदि।

बिल्कुल ठीक संख्या ज्ञात करने के लिए एक-एक शब्द को गिनना चाहिए, किन्तु कुछ लोग 'लगभग' निकालने के लिए मूल की पांच पंक्तियों की शब्द संख्या गिन लेते हैं औसत निकाल लेते हैं और पुनः सम्पूर्ण अवतरण की पंक्तियां गिन लेते हैं तथा गुणा करके औसत निकाल लेते हैं। इस विधि में यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि औसत पंक्तियों के शब्दों को गिनकर निकाले जाय, वाक्यों के शब्दों के नहीं। किन्तु छात्रों को इस पद्धति का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

कभी-कभी प्रश्न पत्रों में मूल की शब्द संख्या दी रहती है अथवा कुछ परीक्षाओं में प्रश्नपत्र में ही लिखा रहता है कि निम्नलिखित अवतरण का इतने शब्दों में संक्षेपण करें। यदि दोनों में संख्या दी गयी तो गिनना नहीं पड़ता है।

संक्षेपण का आकार निर्धारण—मूल अवतरण की शब्द संख्या ज्ञात रहने पर संक्षेपण में प्रयुक्त होने वाले शब्दों की संख्या का अनुमान और आकार का निर्धारण किया जाता है। संक्षेपण का आकार मूल आकार का 1/3 होना चाहिए। अतः मूल अवतरण की शब्द संख्या में तीन से भाग देना चाहिए। जितना भागफल आए लगभग उतनी ही शब्द संख्या संक्षेपण के शब्दों में होनी चाहिए। किसी भी साहित्यिक कार्य के लिए गणितीय शुद्धता की अपेक्षा नहीं की जा सकती। विद्यार्थियों को यह छूट रहती है कि वे भागफलवाली संख्या से दो चार शब्द अधिक या कम दें; किन्तु बहुत अधिक का अन्तर अनुचित है। 5% से अधिक की छूट नहीं देनी चाहिए, किन्तु यदि सीमा दी हुई है, तो यथासम्भव अतिक्रमण नहीं करना चाहिए।

किन्तु संक्षेपण में संख्या की पाबन्दी बहुत दूर तक निभाना थोड़ा कठिन है क्योंकि सदा अनुच्छेद की संख्या तीन से कटने वाली नहीं होती है। यथा मूल अनुच्छेद में 125 शब्द हैं तो इसकी तिहाई होगी 42 से 43 । अतः संक्षेप रूप में 40 से 45तक के शब्दों का संक्षेपण करना उचित रहेगा न कि 30 अथवा 60 शब्दों का। कुछ प्रतियोगिता-परीक्षाओं में संक्षेपण के लिए चौकोर खानेवाली उत्तरपुस्तिकाएँ दी जाती हैं, प्रत्येक वर्ग-खण्ड में एक-एक शब्द लिखा जाता है और इस प्रकार संक्षेपण में प्रयुक्त शब्दों को संख्या निश्चित एवं सरलतापूर्वक ज्ञात हो जाती है। विश्वविद्यालयों में भी ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए।

अतः संक्षेपण का आकार मूल अवतरण के तृतीयांश के लगभग होना चाहिए अथवा यदि प्रश्न में कोई अन्य संकेत हो, तो उसी के आधार पर आकार निर्धारण करना चाहिए।

लेखन—शब्द-गणना और आकार-प्रकार के निर्धारण के पश्चात् अन्तिम और सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य लेखन है। अंतिम लेखन के पूर्व अपने प्रारूप को अच्छी तरह पढ़ लेना चाहिए। यथासम्भव कठिन शब्दों के लिए एक शब्द या संक्षिप्त रूप के प्रयोग का प्रयास करना चाहिए। प्रत्येक शब्द अथवा वाक्य को बदलना बहुत सरल और संभव भी नहीं है, क्योंकि कभी-कभी वाक्य परिवर्तन से अर्थ में भी परिवर्तन हो जाता है। संक्षेपक की शैली सरल और प्रवाहपूर्ण रहनी चाहिए। पंक्तियां असम्बद्ध न हो, सब मिलाकर एक तिहाई का निर्माण करें। भाषा शिष्ट, शुद्ध हो तथा लिखावट स्पष्ट एवं साफ रहनी चाहिए तथा प्रत्येक शब्द को साफ-साफ अलग अलग लिखना चाहिए।

८. **पुनःपरीक्षण**- लेखन के पश्चात् पुनः मूल अवतरण को पढ़कर संक्षेपण से मिलाकर

दोहराना चाहिए। साथ ही ध्यान रखना चाहिए कि कोई मूल महत्त्वपूर्ण बिन्दु छूट तो नहीं गया। फिर संक्षेपण को पढ़कर शब्दों की संख्या गिनकर एक कोष्ठक में लिख दें–(मूल अवतरण की शब्द संख्या और संक्षेपण की शब्द संख्या.....)शीर्षक के औचित्य पर भी एक बार पुनर्विचार कर लेना चाहिए।

पुनर्परीक्षण बहुत आवश्यक है। असावधानी, समयाभाव के कारण त्रुटियां सम्भव हैं, जिनको परिमार्जित करने के लिए पुनर्परीक्षण की आवश्यकता है।

समाचारों का संक्षेपण– समाचार पत्रों के कार्यालय में संक्षेपण का प्रयोग बहुतायत से होता है। किसी नेता के भाषण, महाविद्यालयों में आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेल–कूद प्रतियोगिता की रिपोर्ट आदि की सूचना समाचार पत्र के कार्यालय या समाचार एजेन्सी को भेजी जाती है। प्रायः विभिन्न समाचारों के प्रतिनिधि नेता के भाषण या किसी कार्यक्रमों को शीघ्रलिपि में लिखकर और लिपिबद्ध करके कार्यालयों में भेजते हैं। सहायक सम्पादक लम्बे–लम्बे भाषणों का संक्षेपण करते हैं, क्योंकि पूरा भाषण प्रकाशित करना सम्भव नहीं हे ओर यह भी सतर्कता रखनी है कि एक भी महत्त्वपूर्ण बिन्दु न छूटे। जिन लोगों ने नेता का भाषण या किसी विद्वान् का व्याख्यान प्रत्यक्ष न सुना हो, वे इन भाषण एवं व्याख्यान के सभी महत्त्वपूर्ण अंशों से परिचित हो जायें। अतः वह संक्षेपण विधि का आश्रय लेता है।

भाषणों का संक्षेपण प्रस्तुत करते समय वक्ता का नामोल्लेख आवश्यक है। उसके पश्चात् वक्ता के नाम के आगे 'ने का....ने बताया' आदि का प्रयोग करना पड़ता है। संस्कृत में कर्मवाच्य में वाक्य बनाकर 'नेतृमहोदयेन कथितं यत्......' अथवा कर्तृवाच्य में 'नेता उक्तवान् यत्' इस प्रकार लिखना चाहिए। पुनः प्रत्यक्ष कथन को अप्रत्यक्ष कथन में परिवर्तित करना चाहिए। अनेक शब्दों के लिए एक शब्द तथा प्रासङ्गिक खण्ड वाक्यों का भी प्रयोग करना आवश्यक है। समाचार पत्र में शीर्षक का महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि प्रायः व्यस्त लोग केवल शीर्षक देखते हैं।

पुनः इन समाचारपत्रों का भी संक्षिप्त रूप प्रस्तुत करने की आवश्यकता पड़ती है।

पत्राचारों का संक्षपेण–प्रशासन एवं उद्योग व्यवसाय में पत्राचार का प्रमुख स्थान है। पत्राचार के द्वारा ही सम्बद्ध व्यक्तियों तक समुचित आदेश पहुँचाए जा सकते हैं। पत्राचार के माध्यम से ही दूसरे स्थानों से सम्पर्क किया जा सकता है अथवा ग्राहक या उपभोक्ता अपनी समस्याओं को लिखकर भेज सकता है। अतः संक्षेपण का सबसे अधिक प्रयोग सरकारी कार्यालयों, औद्योगिक प्रतिष्ठानों और व्यापारिक केन्द्रों में हुआ करता है।

प्रशासकीय और व्यावसायिक पत्राचारों में शैली प्रायः सरल होती है। कवित्वपूर्ण और मुहावरेदार वाक्यों का प्रयोग प्रायः नहीं होता। सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि पत्रों का स्वरूप सम्बोधन की शैली, प्रस्तुतीकरण आदि की दृष्टि से समरूप रहता है। इस समरूपता को छांटकर मात्र तथ्यों और आंकड़ें सम्बन्धी विषमताओं को लिखना ही ऐसे संक्षेपण का उद्देश्य है।

पत्राचारों के संक्षेपण की दो पद्धतियाँ हैं–

(1) सामान्य संक्षेपण (2) तालिका संक्षेपण

सामान्य संक्षेपण में क्रमानुसार वर्णनात्मक रूप में समस्त समाचार का संक्षिप्त रूप उपस्थित किया जाता है।

समाचार केवल भाषणों के सारांश नहीं होते अपितु वह हमारे आस-पास घटनेवाली अनेक घटनाओं के विवरण होते हैं। ऐसे विवरण-प्रधान समाचारों का संक्षेपण प्रस्तुत करते समय विवरण के महत्त्व एवं अनेक पारस्परिक सम्बन्ध को भली प्रकार समझना चाहिए। विवरणात्मक समाचारों के संक्षेपण भाषणों के संक्षेपण से अपेक्षाकृत सरल होते हैं। इन सभी प्रकारों के समाचारों में तिथि, स्थान और सम्बद्ध व्यक्तियों के नाम का उल्लेख आवश्यक है। यदि समाचार का प्रकाशन होना है, तो उसमें शीर्षक का बड़ा महत्त्व है। शीर्षक रोचक आकर्षक रहने के साथ-साथ सारगर्भित भी होना चाहिए अर्थात् शीर्षक मात्र पढ़ने से समाचारों की मुख्य बातें स्पष्ट हो जानी चाहिए।

संवाद का अर्थ वार्त्तालाप या कथोपकथन अर्थात् दो या अधिक व्यक्तियों की बातचीत है ऐसे संवादों का संक्षेपण प्रस्तुत करते समय कुछ विशेष नियमों का पालन आवश्यक है। संवादों में अनेक बातें व्यर्थ की भी होती हैं। उन्हें छोड़ देना चाहिए। इसके अतिरिक्त लम्बे संवाद में छोटे-छोटे वाक्यों के कई खण्ड होते हैं। प्रत्येक वाक्य का संक्षेपण नहीं करना चाहिए बल्कि सम्पूर्ण सम्वाद को पढ़कर जहाँ कोई बात समाप्त हो अथवा कोई नयी बात शुरू होती हो, उन्हें रेखाङ्कित कर लेना चाहिए तथा प्रत्येक खण्ड का निष्कर्ष किनारे में लिखते जाना चाहिए। जहाँ परस्पर विरोधी विचार हों, वहाँ प्रत्येक विरोधी के तर्कों को अलग-अलग अनुच्छेदों में रखा जा सकता है।

संवादों का संक्षेपण करते समय अप्रत्यक्ष कथन का प्रयोग करना चाहिए। संवादों को इस रूप में रखना चाहिए कि श्रोता और पाठक को वक्ता या पात्रों की मनोदशा और भावभङ्गिमा आदि का भी आभास मिल सके।

७.३. संक्षेपण के प्रदर्श

1. सामान्यतः सर्वेषां प्राणिनां वैयक्तिकमर्यादानुसारेण उचितव्यवहारो विनय इति व्याह्रियते। प्रायः गुरूणामादरः पूजा च समवयस्कैः सह मित्रत्वम् इतरेषां लघुप्राणिनाम् अल्पवयस्कानां च कृते साहाय्यमेव विनयः। विनीतो जनो न कमप्यवमन्यते। इत्थं स सर्वेषां प्रेमास्पदं भवति। गुरवः आत्मानुभवेन, मित्राणि साहाय्येन अपरे वयस्काश्च तस्य विनयभाव-सम्पन्नस्य समृद्ध्यर्थं यतन्ते । सोऽपि लोकसङ्ग्रहार्थं दिव्यादर्शान् प्रकाशयति सर्वेषामभ्युदयायैव । विद्यासम्पन्नो हि एवं कर्त्तुं शक्नोति। यतः हि स 'स्वार्थो यस्य परार्थ एव स नृणामग्रणीरिति सिद्धान्तानुरूपं सकलजीववर्गान् उपकरोति। स शत्रुमपि शीघ्रमेव मित्रं भविष्यतीति विमृश्योपकारार्हं मन्यते। केनापि कृतमपराधं विस्मरत्येव। अज्ञानवशीकृतः पुरुषो मां प्रति दुर्व्यवहरतीति मत्वा स दुश्चरितपुरुषं दयापात्रं मन्यते। एवं विकसितबुद्धयो हि विनयशीलाः सत्कर्मप्रतिपन्ना अहंभावविरहिता यथार्थविद्यायाः मूर्त्तरूपा एव।

संक्षेपणम्

सर्वेषां लघुगुरुप्राणिनां कृते मर्यादितो व्यवहाराचारः एव विनयः कथ्यते। विनीतो जनः सर्वेषां प्रेमास्पदं भवति। मित्रादयः सर्वे तस्य समृद्ध्यर्थं यतन्ते। सोऽपि सर्वेषाम् अभ्युदयाय प्रयतते। अहंभाव-विरहितः सत्कर्मप्रतिपन्नः परार्थहिते निरतः सः शत्रुमपि मित्रं मत्वा सततं सकलजीवानाम् उपकरोति।

मूलावतरणस्य शब्दसंख्या-100

संक्षेपणस्य शब्दसंख्या - 33

शीर्षकम् विनयः

2. सततं संसरणशीलेऽस्मिन् संसारे परिवर्तनं नाम शाश्वतिको अनिवार्यो वा नियमः, अतएव अत्रत्याः सकलपदार्थाः अनेन परिवृत्तिनियमेनाबद्धाः सदैव परिवर्तनचक्रे भ्रमन्तोऽवलोक्यन्ते। यदा सूर्यचन्द्रसमीरणादयोऽपि नैवैकरसाः सदा तिष्ठन्ति तदा का गणना अल्पायुषां मानवानां मानवभोग्यपदार्थानां वा । न केवलं तारकामण्डलमपितु समस्तं भूमण्डलं चैतच्चराचरं जगदेव परिवर्तनचक्रे समाबद्धं सततम् अहरहः परिवर्तते।

परिवर्तननियमस्य अस्य प्रभावो मानवजीवने स्फुटं विभाव्यते। एकदा यौवनाश्वमारूढः तारुण्यमदमत्तो जनः सकलं जनं तृणाय मन्यमानः कठोरात् कठोरतमान्यपि कार्याणि अनायासेनैव सम्पादयितुम् उद्युङ्क्ते। स एव कालान्तरे वृद्धत्वमापन्नः पदात्पदमपि गन्तुं न प्रभवति स्वकीयं जीवनमपि येन केनापि प्रकारेण परमुखापेक्षी भूत्वा गमयति। एकदा मानवो धनधान्याद्यैश्वर्यशाली विविधान् सरसान् भोगान् भुञ्जानः अन्यान् दीनजनानपि पालयितुं क्षमते स एव परिवर्तमानस्थितिप्रभावेण निःस्वतां प्राप्तः यवानां प्रसृतये श्रीमतां द्वारमासेवते।

संक्षेपण– परिवर्तनं संसारस्य अनिवार्यो नियमः। अत्रत्याः सकलपदार्थाः रविशशिपवनादयश्चापि परिवर्तनचक्रे समाबद्धाः। मानवजीवनमपि न एकरसम् अपितु सततं परिवर्तनपरम् । यौवनावस्थायाम- वस्थितः जनः सर्वजनं तृणमिव मत्वा असाधारणकार्यमपि कर्तुं शक्नोति परं सैव जनः वृद्धावस्थायां अशक्तः सन् परमुखापेक्षी भवति। कोऽपि समृद्धः मानवः दीनजनान् पालयति; परन्तु कालान्तरे दुर्दैवात् स्वयमेव अन्यान् याचते।

मूलावतरणस्य शब्दसंख्या-150

संक्षेपणस्य शब्दसंख्या - 53

शीर्षकम् संसारस्य परिवर्तनीयता

३. भारतीयसंस्कृतेः वैशिष्ट्यं विश्वबन्धुत्वम् सर्वेऽपि जनाः परस्परं बन्धुभावेन वर्त्तन्तां, जगदीश्वरे च पितृत्वबुद्धिः प्राणिमात्रे च बन्धुत्वधीः भवताम् इत्यस्य मौखिको भावः। विचारसहिष्णुतापि अपरं वैशिष्ट्यं भारतीय-संस्कृतेः। ईश्वरानीश्वरवादौ, वेदपौरुषेयापौरुषेयत्ववादौ, वाममार्गदक्षिणमार्गभेदौ च परस्परं सहिष्णुतया विद्यन्ते इति न कस्यापि अविदिता भारतवर्षे। सत्यपि धर्मभेदे न हि कुत्रचित् कस्यचिदुपरि अत्याचारोऽन्यायो वा अवलोक्यते। किमधिकम् अत्र भारते नास्तिकोऽपि स्थानं लभते। भारतीयसंस्कृतेः तृतीयं महत्त्वन्तु अहिंसा। हिंसा हि खलु प्राणिनाम् उत्पीडनम्। मनसा वाचा कर्मणा च तद्विरह एव अहिंसा। यदा हिंसाभाव एव मानवानां हृदयपटले नोत्पत्स्यते तदा परस्परं जिघांसावृत्तयः कथमिव उदयम् आसादयेयुः। स एव अहिंसाधर्मः भारतीय-सभ्यतायाम् अतीव उच्चपदम् अलङ्करोति। अहिंसाधर्मः सर्वेभ्यः

मानवेभ्यः प्राथम्येन समुपदिष्टः सर्वैः जनैः कर्त्तव्यत्वेन प्रतिपालनीयः एव। धर्मप्राधान्यमपि भारतीय-संस्कृतेः वैशिष्ट्यम्। धर्म एवं पशुभ्यो मानवान् विशिनष्टि।

संक्षेपीकरण–

विश्वबन्धुत्वं विचारसहिष्णुता च भारतीय संस्कृतेः वैशिष्ट्यम्। धर्मदर्शनादिभेदेऽपि भारतीयसमाजे कुत्रचिद् अत्याचारोऽन्यायो वा न दृश्यते। अहिंसा अस्याः तृतीया विशेषता। प्राणिनाम् उत्पीडनं हिंसा वा निन्द्यते। भारतीयसभ्यता अहिंसाधर्मापेक्षिणी। सैव सर्वमानवेभ्यः उपदेष्टव्या पालनीया च सर्वथा। मानवतापोषकं धर्मप्राधान्यमपि अस्याः वैशिष्ट्यम्।

मूलावतरणस्य शब्दसंख्या–104

संक्षेपणस्य शब्दसंख्या –36

शीर्षकं–भारतीयसंस्कृतेः वैशिष्ट्यम्

4. सत्सङ्गतिस्तु मनुष्याणां अपूर्वं कल्याणं करोति। मानवास्तु साधारण्येनार्थ–कामपरेषु व्यापारेषु निमग्नाः प्राकृतं जीवनं यापयन्ति। यदि नाम तत्र किमपि स्थानं धर्मस्य मोक्षस्य वा वर्तते, तत्तु सत्सङ्गतिप्रभावेणैव सम्भवति। अर्थकामप्रवृत्तयः तात्कालिकफलवत्य इति कस्यचित्पुरुषस्य तत्राकर्षणं भवति। न तथा भवति धर्मस्य मोक्षस्य वा प्रवृत्तीनां तावन्मात्रं साक्षात् फलम्। अतो उदात्तप्रवृत्तिं प्रति जीवनस्य अभिमुखीकरणे सत्सङ्गतेः माहात्म्यं स्पष्टमेव।

महाजनस्य संसर्गः सर्वेषाम् उन्नतिकारकः जायते यथा पद्मपत्रसंसर्गेण जलमपि केवलं मुक्ताफलश्रयमेव विधत्ते। इत्थं साधुजनानां समागमेन दुर्जनः न केवलं दौर्जन्यमेव त्यजति परं सोऽपि सज्जनायते। काचोऽपि काञ्चनसंसर्गेण मरकतमणेः द्युतिं धत्ते। यथा सूर्यस्य सम्पर्कतः दर्पणः दहनद्युतिं धत्ते तथा क्षुद्रोऽपि प्राणी सतां संसर्गेण तेजस्वितां तनुते। किं वा बहुना, परिजल्पितेन महतां संसर्गः महते पुण्याय कल्पते। तस्मात् असतां सङ्गं विहाय सतां सङ्गः करणीयः। कुसङ्गात् सुजनाः निन्दां लभन्ते। सन्तप्ते अयसि पतितस्य पयसो नामापि नावशिष्यते। परं तदेव जलं यदा नलिनीपत्रसंस्थितं भवति तदा मुक्तावत् राजते।

संक्षेपीकरण–उदात्तकर्माभिनिवेशिनां सत्कर्मपरायणानां सतां सङ्गतिः सत्सङ्गतिः कथ्यते। एषा मानवानां सर्वथा कल्याणकारिणी पुरुषार्थचतुष्टयसाधिका च। सत्सङ्गतेः प्रभावेण दुर्जनोऽपि सज्जनायते। क्षुद्रोऽपि प्राणी सत्सङ्गत्या तेजस्वितां तनुते। कुसङ्गतिश्च निन्दाप्रदा विनाशिनी च। अतः असतां सङ्गं विहाय सतां सङ्गः एव करणीयः।

मूलावतरणस्य शब्दसंख्या–

संक्षेपणस्य शब्दसंख्या – 37

शीर्षकं–भारतीय संस्कृतेः वैशिष्ट्यम्

5. साहित्यं समाजस्य छायेव विद्यते। तत् तथैव समाजं त्यक्तुं न शक्नोति यथा कस्यापि विचरणशीलस्य मनुष्यस्य छाया तं मनुष्यं न परित्यजति। परमत्र विकल्पः वर्तते यत् मनुष्यस्य छाया सदैव मनुष्यस्य अनुकरणमात्रमेव करोति न स्वानुकरणं कारयति । परं साहित्यं समाजमनुगच्छति एवं यदा-कदा तस्य समाजस्य पथ-प्रदर्शकरूपेण समाजस्य मार्गे स्वसन्निहितज्ञानेन अनुभवेन च प्रकाशस्य रश्मीन् विस्तारयति। साहित्यं समाजस्य भावनानां समूहो विद्यते, समाजस्य बौद्धिकविकासस्य आधारभूता शिला इव विद्यते। साहित्यं समाजस्य

आदर्शानां निकषमिव समाजस्यान्तःकरणस्य अभिव्यक्तिः च विद्यते। साहित्यकारः सामाजिकः मनुष्यः, संसाराद्विरक्तो भूत्वा वनेषु विचरणशीलः नैव भवति। भोजनपानैः, आचारविचारैः, धर्मकर्मभिः, पारस्परिक- सम्बन्धैः, मोहममताभिः आदानप्रदानैः वार्तालापादिभिः समाजेन तस्य सम्बन्धो जायते। सः समाजे निवसति, सर्वैः सह तस्य सम्बन्धः विद्यते। सर्वेषां दुःखेषु दुःखी, प्रसन्नतायां प्रसन्नो भूत्वा साहित्यकारः साहित्यं विरचयति। साहित्यकारः यत्किञ्चिदपि लिखति सर्वतः व्याप्तेन वातावरणेन प्रभावितो भूत्वैव। सामाजिकसम्पर्केण तस्य जीवने क्रिया प्रतिक्रिया वा साहित्यरूपं प्राप्नोति।

संक्षेपणम्– समाजस्य छायेव साहित्यं तमनुसृत्य पथप्रदर्शकरूपेण दिशां निर्दिशति प्रकाशरश्मीन् च प्रसारयति। छायामात्रं मानवानुकारिणी न तथा साहित्यम्। साहित्यं सामाजिकभावनाम् अभिव्यनक्ति। समाजस्य बौद्धिकविकासस्य आधारशिलेव भवति। साहित्यकारः सामाजिकः इव जीवनं व्यत्येति। समाजस्य जनानाम् दैनिकमाचरणं संपश्यन् तस्य सुखदुःख–हिताहितादिकं स्वरचनायां सन्निवेशयति। अतः साहित्यं सामाजिकजीवनस्य क्रिया–प्रतिक्रियाः अनुकरोति नवीनताञ्च आपादयति।

मूलावतरणस्य शब्दसंख्या–

संक्षेपणस्य शब्दसंख्या– 47

शीर्षकं–समाजस्य दर्पणः साहित्यम्

७.४. सारांश

किसी लम्बे गद्यांश के पूरे–पूरे भाव को संक्षिप्त रूप में स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करना संक्षेपण कहलाता है। संक्षेपण में किसी अनुच्छेद या गद्यांश का निष्कर्ष संक्षिप्त रूप में स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करना संक्षेपण कहलाता है। संक्षेपण में किसी अनुच्छेद या गद्यांश का निष्कर्ष संक्षिप्त, स्पष्ट, क्रमबद्ध एवं पूर्णता के साथ लिखना चाहिए। यदि शब्दसंख्या न दी गई हो तो एक तिहाई में लिखना चाहिए। यथासम्भव प्रचलित एवं व्यवहार्य शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। आलङ्कारिक तथा वर्णनात्मक शैली के विपरीत समास शैली तथा सरल वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए। अनुच्छेद का एक शीर्षक दे देना चाहिए। शीर्षक छोटा तथा अनुच्छेद के केन्द्रीय भाव को व्यक्त करनेवाला होना चाहिए। प्रश्नों के उत्तरों की भाषा सरल तथा वाक्य छोटे–छोटे होने चाहिए। सारलेखन में यथासम्भव अन्य पुरुष, परोक्ष कथन और भूतकाल का प्रयोग नहीं करना चहिए।

७.५. अभ्यास के प्रश्न

नीचे कुछ संक्षेपण की रूपरेखाएँ दी जा रही हैं उनके आधार पर संक्षेपण करें।

(1) संस्कृतेऽधुनाऽपि पञ्चाशत् पत्र–पत्रिकाः प्रकाश्यन्ते, प्रतिवर्षं, शतादप्यधिका अभिनवग्रन्था विरच्यन्ते, सहस्रेषु संस्कृतविद्यालयेषु संस्कृतद्वारा विद्यार्थिनः शिक्ष्यन्ते, यस्मिन् सहस्रशः शास्त्रार्थविवादादयः प्रतिवर्षमायोज्यन्ते च। किमधिकं तस्य संस्कृतस्य जीवनस्य

लक्षणम्? चिरकालात् सुसभ्यैः स्वीकृतेयं संस्कृतभाषा सर्वोच्चात्मविकासाय, साधु जीवति, जीविष्यति च शाश्वतम्।

ध्रुवमेव संस्कृतं भृशं जीवति। तस्य मरणं कदापि न भूतं नापि भविष्यति वेति साधुमतम्। संस्कृतम् अवलम्ब्य परस्परवार्तालापादिना वा संस्कृतस्य प्राणवत्ता सर्वेषां मनसि यथा प्रतिफलेत् तथा प्रयतनीयं संस्कृतानुरागिभिः। तथा हि स्वकुटुम्बेऽपि दैनन्दिनकार्येषु संस्कृतेन व्यवहर्तव्यम्। संस्कृतस्य विद्यार्थिनः प्राध्यापकाश्च परस्परं संस्कृते वदेयुः। मिथः पत्राचारः च संस्कृतेन कुर्युः। संस्कृतसंस्थासु महाविद्यालयेषु विश्वविद्यालयेषु च केवलमपवादरूपेण संस्कृतेतरभाषा प्रयोज्या। कस्या अपि भाषायाः साहित्यस्य वा सम्यग्ज्ञानं तावत्कालं न भवेत् यावत्कालं तया भाषया न सम्भाष्यते। इदमेव तथ्यं विचार्य संस्कृतविद्यार्थिभिः संस्कृतेनैव भाषणीयम्।

सङ्केतबिन्दवः—

1. अधुना अपि संस्कृतभाषायाम् पत्र-पत्रिकाः ग्रन्थाश्च प्रकाश्यन्ते।
2. संस्कृतमाध्यमेन शिक्षार्थिनः पाठ्यन्ते, शास्त्रार्थ-गोष्ठ्यादयः आयोज्यन्ते संस्कृतानुरागिभिः।
3. संस्कृतस्य अध्येतृभिः संस्कृते एव सम्भाषणम्, पत्रलेखनम् च करणीयम्। दैनन्दिनकार्येषु संस्कृतनैव व्यवहर्तव्यम्।

अभ्यास के प्रश्न (२)

संकेत बिन्दुओं के आधार पर संक्षेपण करें।

भारतदेशोऽधुना स्वतन्त्रो वर्तते। किन्तु देशे अस्मिन् स्वातन्त्र्यं नाममात्रमेव दृश्यते। तथा हि अधुना सर्वासु राष्ट्रियप्रवृत्तिषु वयं न सम्यक् सन्नद्धाः। प्रादेशिकभाषाणां राष्ट्रभाषाया वा अभ्युदयाय वयं न तावन्मात्रं प्रयत्नशीला यावन्मात्रम् आङ्ग्लभाषायाः प्रसाराय उत्थानाय वा। पारतन्त्र्ययुगेऽपि आङ्ग्लभाषाया अध्ययनं प्राथमिकशालासु अनिवार्यं नाभवत्, किन्तु तदेव स्वतन्त्रे भारते प्रायः सर्वेभ्यः विद्यार्थिभ्यः अनिवार्यं सञ्जातम्। सर्वासु शिक्षणसंस्थासु न केवलमध्ययनविषया अपि तु विद्यार्थिनां शिक्षकाणां च वेशभूषा प्राक्तनकालतोऽपि अधिकतरं योरपीयपद्धतिम् अनुसरति। पूर्वं तावत् भारते समुद्भूतानां महापुरुषाणाम् आदर्शभूतानि नामानि सुचरितानि वचनानि च प्रेरणाप्रदायीनि आसन्। अधुना तानि सर्वाणि विस्मृतानि एव। न दृश्यते कर्हिचित् भारते भारतीयता नाम। तर्हि क्व वर्तते भारते स्वतन्त्रता इति वितर्कः। हा कष्टं खलु, भारतराष्ट्रस्य नीतिविशारदानाम् औदासीन्यम् एषु विषयेषु।

कस्यचिद्राष्ट्रस्य निर्माणे शिक्षणसंस्थानां प्रतिभागिता महत्त्वपूर्णा वर्तते। दुर्भाग्यवशादाधुनिकयुगे भारतीयशिक्षणसंस्थाः तैः एव महाभागैः प्रायशः संचाल्यन्ते, येषां दृष्टिः आर्षपथात् विमुखीभवति। स्वयमेव ते वैदेशिक-शिक्षापरायणा वैदेशिकसंस्कृतौ स्नाता विद्यन्ते। आत्मीयां नैसर्गिकीमपि भारतीयतां परित्यक्तुकामा ते भारतं भारतीयतां च बोद्धुमपि असमर्था लक्ष्यन्ते।

मुख्यबिन्दवः—

1. स्वातन्त्र्योत्तरभारतेऽपि राष्ट्रभाषाप्रादेशिकभाषाभ्यः अधिकमाकर्षणम् आङ्ग्लभाषायाः लोके दृश्यते।
2. आधुनिक शिक्षाप्रणाल्यां प्राथमिकशालास्वपि आङ्ग्लशिक्षाया अनिवार्यता प्रस्तूयते।
3. परिधानमपि योरोपीयपद्धतिमनुसृत्य विधीयते।
4. शिक्षासञ्चालकाः अपि वैदेशिकशिक्षापरायणा दृश्यन्ते। तेषां विचाराः पाश्चात्त्यसंस्कृतिम् आधारीकृत्य प्रवर्तन्ते। पाश्चात्त्यसंस्कृतेः प्रसारस्य एतादृशी एव दृष्टिः कारणम् भवति भारतीयतायाः क्षरणस्य।

अभ्यास के प्रश्न (३)

निम्नलिखित रूपरेखाओं के आधार पर संक्षेपण करें :

सर्वे जनाः स्वप्रतिष्ठायै यतन्ते। परं हि नाम लिङ्गविशेषेण, वयस आधिक्येन वा पूजार्हत्वं न प्राप्यते। बालो वृद्धो वा पुरुषः स्त्री वा सममेव अस्माकं पूजायाः पात्रमस्ति इति यदि तेषु गुणाः वर्तन्ते। कस्यापि पूजा स्त्रीत्वेन पुरुषत्वेनैव वा केवलं न भवति। स्त्रीषु अहल्याबाई लोकातिगगौरवान्विता । लक्ष्मीबाई च भारतदेशे कस्मादपि पुरुषान्न्यूनत्वेन न दृष्टा । कामपि गुणविहीनाम् स्त्रीत्वेन केवलम् अल्पमतयः पूजयन्ति। गुणस्तु शाश्वतो नित्यः सनातनश्च यथा स्वर्णमयानि वस्तूनि बहवः क्रीणन्ति, तथैव गुणवान् पुरुषो जनानामादरं लभते।

वृद्धः धनिकोऽपि वा जनः यदि गुणविहीनः स आदरं पूजां वा नार्हति। नोचितं केवलं वृद्धत्वं पूजार्हम् । बालगुणान् बालकानपि महर्षयः पूजयन्ति। अल्पवयसं रामम् ऋषयः सर्वे सादरं पूजितवन्तः। ध्रुवस्तु सर्वेषाम् ऋषीणाम् आदरपात्रम् अभूत्। गुरुगोविन्दसिंहस्य स्वध र्मरक्षकौ द्वौ पुत्रौ कोटभित्तौ विधर्मिभिः निवेशितौ अधुनापि किन्नार्हतः पूजाम्? अभिमन्युकथा बालकानाम् शूराणां च सहैव पूज्यत्वं भजते । पण्डितस्य अष्टावक्रस्य बालत्वं पूज्यत्वं नाधि क्षिपति।

संकेत बिन्दवः

1. सर्वे जनाः स्वप्रतिष्ठायै यतन्ते।
2. कस्यापि पूजा स्त्रीत्वेन पुरुषत्वेन वा न भवति।
3. अल्पमतयः गुणविहीनान् पूजयन्ति।
4. ध्रुवः सर्वत्र ऋषीणामपि आदरास्पदम्ः अभवत्।
5. पण्डितः अष्टावक्रः बालवयसि पूजितः जातः।

अभ्यास के प्रश्न (४)

निम्न बिन्दुओं के आधार पर संक्षेपण करें:

अथ स्वतन्त्रे भारते संघे शक्तिः इति मत्वा लोके अधुना यत्र तत्र संघाः अवलोक्यन्ते। क्वचित्कर्मकराणां संघः, क्वचित् वणिजां संघः, क्वचित् व्यवसायिनां, क्वचित् छात्राणां संघाः, क्वचिदध्यापकानां, क्वचित् शिल्पिनां संघाः, क्वचित् नापितानाञ्च विद्यन्ते। किम्बहुना अद्य भारते पृथक्-पृथक् सर्वेषाम् वर्गाणां संघाः दृश्यन्ते। सर्वे संघाः सम्भूय यं कमपि विषयं परामृशन्ति। परामर्शानन्तरं ते सर्वकारं, मिल-स्वामिनः विज्ञापयन्ति, यदेतावद्दिनाभ्यन्तरे यावदस्माकं

वेतनं वर्धताम् नोचेत् सर्वं कार्यजातं स्थगितं निरुद्धं वा भविष्यति। अद्य जनानां दुराग्रहोऽपि सत्याग्रहः। प्रायः प्रतिदिनं कस्यापि संघस्य दुराग्रहः सत्याग्रहो वा प्रारब्धः इति श्रूयते ऽवलोक्यते च। तेन राज्येऽधिकृताः शासकाः अपि महतीं चिन्ताम् आपद्यन्ते। अद्य क्षुद्रात् क्षुद्रोऽपि जनः सेवको नापितो चर्मकारोऽन्त्यजोऽपि वा केनचिदपि धर्षयितुम् अवहेलयितुं वा न शक्यते। संघबलेन जनाः कदाचिदुचितं प्रायः अनुचितमेव कार्यं कुर्वन्ति।

संकेतबिन्दवः–

1. लोके संघे एव शक्तिः।
2. भारते अपि पृथक् पृथक् सर्वेषां वर्गाणां संघाः दृश्यन्ते।
3. प्रतिदिनं कस्यापि संघस्य दुराग्रहः सत्याग्रहः वाऽवलोक्यते।
4. अद्य क्षुद्रातिक्षुद्रः अपि जनः संघबद्धः ।
5. अधुना संघबलेन जनाः उचितानुचितं कार्यं प्रकुर्वन्ति।

अभ्यास के प्रश्न (५)

निम्नलिखित रूपरेखाओं के आधार पर संक्षेपण करें:

ग्रामे सर्वं पुष्टं भवति, सर्वं स्वस्थं च भवति, न तथा नगरेषु। वस्तुतो ग्रामा वननगरयोर्मध्ये राजन्ते। एतेषु ग्रामेषु प्राकृतिकशोभा वनमनुसरति। प्रकृतिवत् ग्रामजना वर्धन्ते स्वतन्त्ररूपेण। न तत्र कृत्रिमतायाः आडम्बरस्य, चाकचिक्यस्य वा समादरो भवति। तथापि नागरिकताया योगः ग्रामेषु प्राप्यते एव। तत्र नगरवद्राजशासनम्, व्यापार-व्यवस्था, क्वचित् कष्टबहुला दिनचर्या च सन्त्येव।

ग्राम-परिसरे चराचरं शोभनं स्वस्थं सोल्लासं भवति। तत्र सर्वे जनाः सौहार्दपूर्णा निश्छलाश्च प्रतिभान्ति। ग्रामपथिकानां गोपालानां च सङ्गीतेन हृदयं सुप्रीतं जायते। वृक्षा निःशुल्कमेव शरणं भोजनं च ददति। ग्रामभूमेः क्षेत्राणां हरित्त्वेन नेत्रे शीतले भवतः। जलाशयानां विविधवर्णाभरणैः कुमुदादिभिः दृष्टिः निगडीक्रियते। शुक-हंस-मयूर-सारस-कोकिल-नीलकण्ठादयः पक्षिणो, गो-महिष-मेषादयः पशवश्च समाचरन्ति, अटन्ति, जलाशयेषु तरन्ति च । केदारके रसार्द्राणि इक्षुवनानि पवनवशेन नृत्यन्ति इव । कृषककन्यकाभिः प्रतिषिद्धा अपि शुकाः अस्माकमपीदं क्षेत्रम्, अस्य च भागग्राहिणो वयम् इत्युच्चैरुच्चारयन्त इव कणिकाः चिन्वन्तितराम्।

सङ्केत-बिन्दवः

1. ग्रामे सर्वं शोभनं स्वस्थं पुष्टं च भवति।
2. ग्रामेषु प्रकृतिशोभा सर्वत्र राजते न तथा नगरेषु।
3. तत्र जनाः सौहार्दपूर्णाः निवसन्ति।
4. वृक्षादयः निःशुल्कमेव सर्वेभ्यः शरणं भोजनं च ददति।
5. शस्यादीनां हरितकं शुकहंसादिपक्षिणां कलरवः च ग्रामश्रियं वर्धयतः।

अभ्यास के प्रश्न (६)

निम्नलिखित संकेत बिन्दुओं के आधार पर संक्षेपण करें:

नूनमन्वर्थकम् इदम् ऋतुराज इति नाम वसन्तस्य। स हि सर्वालसतामूलं जडतां च दूरत एव परिवर्जयति। शिशिरस्य विनाशकः परिहरतितराम् शैत्यस्य उग्रताम्, उदग्रतमां, च सकलललाटन्तपस्य सूर्यस्य उष्णताम् च। स्वयमनुसरति नातिमृदु नातितीक्ष्णं च पन्थानम्। अतएव प्राप्नोति आत्मने सर्वलोकप्रियताम्। अतएव च किल इमं प्रतिपदं सोत्कण्ठं प्रतीक्षते सचराचरं जगत्। कदा वासौ कान्तो वसन्ताधिराजः आयास्यतीति। दूरत एव अपसरति भुवनकष्टदायी शिशिरऋतुः। दृश्यते चानुपदं ऋतुराज-स्वागताय समुद्यतः अखिलः लोकः। तथा हि स्थाने-स्थाने ऋतुराजगुणान् गायताम् पिककुलानां निनदः प्रसरति। सर्वतः अवकीर्यते मधुशीकरार्द्रः सुगन्धि : कुसुमपरागः विविधपुष्पाणाम् । परितः नवोद्गतैः पल्लवजालैः समाबध्नन्ति च नेत्राणि आम्रपादपाः।

सङ्केत-विन्दवः

1. ऋतुराजः वसन्तः प्रकृतेः जडतालसतापहारी विद्यते।
2. एष शिशिरप्रभावविनाशकः अस्ति।
3. अखिललोकः ऋतुराजस्वागताय समुद्यतः भवति।
4. पिककुलः स्वस्वरेण चराचरम् आनन्दयन् वसन्तगुणं गायति।
5. पुष्पाणां सुरभयः आम्रवृक्षाणां मञ्जर्यः च ऋतुपतिम् अलङ्कुर्वन्ति।

अभ्यास के प्रश्न (७)

निम्नलिखित संकेत के आधार पर संक्षेपण करें:

वर्ण-व्यवस्था भारतवर्षे अतीव पुरा नासीत्, अत्र न कापि विचिकित्सा। अद्य वर्णव्यवस्था व्यावहारिकी न वेति प्रश्नोऽयं स्वभावतः समुज्जृम्भते। गुणकर्माणि दृष्ट्वा यथायोग्यं जनानां या व्यवस्था सा वर्णव्यवस्था। सा व्यावहारिकी अस्ति न वा इति प्रश्नः। वर्णव्यवस्था जातिव्यवस्था च पर्यायवाचिनौ शब्दौ। वर्णव्यवस्थाया उत्पत्तिः प्रादुर्भावो वा कदा अभवत् इति तु विनिश्चेतुं वयम् अक्षमाः। ऋग्वेदे वर्णव्यवस्था स्वभावतः न प्राप्यते यथा बैनफे-म्योर-जिमर महोदयानां कथनमत्र यत् 'ऋग्वेदे वर्णव्यवस्थायाः सत्ता नास्ति।' सेनार्टमहोदयोऽपि इदमेव मतं परिषोषयति। अस्मिन्विषये विपरीतां धारणां परिपोषयति ओल्डनवर्गः। मैक्समूलरमहोदयस्य कथनमस्ति यत्' वैदिककाले वर्णव्यवस्थाया साम्प्रतिकं रूपम् आसीत् न वेति निश्चयपूर्वकं कथयितुं न प्रार्यते। भारतीय-वैदिक-साहित्यस्य प्रमुखाध्येता बेबरमहोदयः कथयति यत् ऋग्वेदकाले वर्णव्यवस्थाया रूपं प्रायः निर्धारितमासीत्।

सङ्केत-विन्दवः

1. भारतवर्षे वर्णव्यवस्था नातिप्राचीना।
2. पूर्वं गुणकर्मविभागकृता व्यवस्था एव वर्णव्यवस्था आसीत्।
3. ऋग्वेदे वर्णव्यवस्था स्वभावतः न प्राप्यते।
4. अद्यतना वर्णव्यवस्था न तथा व्यावहारिकी।
5. मैक्समूलर-बेबरप्रभृतयः ऋग्वेदकाले वर्णव्यवस्थास्वरूपं निर्धारितं मन्यन्ते।

अभ्यास के प्रश्न (१)

संक्षेपण करें:

उत्सवे, व्यसने, दुर्भिक्षे, राष्ट्रविप्लवे, शत्रुसंकटे च यः सहायतां करोति सः बन्धुः भवति। यदि विश्वे सर्वत्र एतादृशः भावः प्रसरेत् तदा विश्वबन्धुत्वं सम्भवति।

परन्तु अधुना निखिले संसारे कलहस्य अशान्तेः च वातावरणम् अस्ति। येन मानवाः परस्परं न विश्वसन्ति, ते परस्य कष्टं स्वकीयं कष्टं न गणयन्ति। अपि च समर्थाः देशाः असमर्थान् देशान् प्रति उपेक्षाभावं प्रदर्शयन्ति, तेषाम् उपरि स्वकीयं प्रभुत्वं च स्थापयन्ति। तस्मात् कारणात् संसारे सर्वत्र विद्वेषस्य, शत्रुतायाः, हिंसायाः च भावना दृश्यते। देशानां विकासः अपि अवरुद्धः भवति।

एतेषां सर्वेषां कारणं विश्वबन्धुत्वस्य अभाव एव। इयम् महती आवश्यकता वर्तते यत् एकः देशः अपरेण देशेन सह निर्मलेन हृदयेन बन्धुतायाः व्यवहारं कुर्यात्। यदि इयं भावना विश्वस्य जनेषु बलवती स्यात् तदा विकसिताविकसितदेशयोः मध्ये द्वेषरहिता स्पर्धा भविष्यति। येन सर्वे देशाः ज्ञानविज्ञानयोः क्षेत्रे मैत्रीभावनया सहयोगेन च समृद्धिं प्राप्तुं समर्थाः भविष्यन्ति।

अस्माभिः अवश्यं ध्यातव्यं यत् विश्वस्य सर्वेषु मानवेषु समानं रुधिरं प्रसरति। सूर्यस्य चन्द्रस्य च प्रकाशः सर्वत्र समानरूपेण प्रसरति। अनेन ज्ञायते यत् प्रकृतिः अपि सर्वेषु समत्वेन व्यवहरति, तस्मात् अस्माभिः सर्वैः वैरभावम् अपहाय विश्वबन्धुत्वं सेवनीयम्।

अभ्यास के प्रश्न (२)

संक्षेपण करें:

भारतवर्षे समाजसुधारकेषु महर्षिदयानन्दो मूर्धन्यः। तस्य समाजसुधारकार्येषु सर्वोत्कृष्टत्वं पाश्चात्त्यैरपि मनीषिभिः साह्लादम् उद्घोष्यते। स महर्षिरेव जन्ममूलां जातिप्रथां निरस्य बद्धमूलम् अनर्थमूलं च सर्वविधमपि पाषण्डप्रपञ्चम्, धार्मिकमन्धानुकरणम्, अन्धविश्वासं भूतप्रेतादिप्रवादं च निराकरोत्। मूर्तिपूजैषा सर्वविधायाः पाषण्डपरम्पराया आधारभूतेति निर्णीय अस्या वेदविरुद्धत्वं चावगत्य, युक्ति-प्रमाणपुरःसरं मूर्तिपूजाम् अखण्डयत्। मृतानां पितणां श्राद्ध-तर्पणादिविधिरपि वेदविरुद्ध एवेति स प्रत्यपादयत्। मातृशक्तेरुन्नतिमन्तरेण न देशोन्नतिः सम्भवतीति विचारं विचारं स्त्रीशिक्षायां बलं न्यधात्। स च स्त्रीशिक्षायाः सर्वप्रथमप्रचारकत्वेन अभिनन्द्यते। स आर्षपद्धतिमनुसृत्य गुरुकुलसंस्थापना-समकालमेव कन्यागुरुकुलपद्धतिम् अपि प्रावर्तयत्। अस्पृश्योद्धारविषये स महात्मनो गान्धेरग्रेसरः। स बालविवाहम् अहितकरमिति निश्चित्य न्यषेधयत्, विधवाविवाहम्, विधवाश्रमम्, अनाथालयादिकं च प्रावर्तयत्।

अभ्यास के प्रश्न (३)

निम्नलिखित गद्यांश का संक्षेपण करें।

हिंसा यथाशक्यं वर्जनीयेति सत्यमेव। यत्र अहिंसया कार्यं सिध्येत्, न तत्र हिंसा प्रयोज्या। यद्यपि प्रायशोऽस्माकं कार्याणि हिंसां विनापि सिद्धानि स्युः तथापि हिंसा तत्र प्रयोज्यते। हिंसाद्वारा आतङ्कस्य स्थितिं संसृज्य यदा कदा साफल्यमपि प्राप्यते इति राष्ट्रियेतिहासेन स्पष्टमेव निदर्शितम् । या शान्तिःहिंसया लभ्यते, सा प्रायशः श्मशान-शान्तिरेव। वास्तविकी शान्तिः केवलमहिंसया लभ्या, विशेषतः राष्ट्रियजीवने। हिंसायाः परमोपयोगो भवति सैनिकानां

कृते वैदेशिकशत्रुभ्यः देशस्य संरक्षणार्थम्। राष्ट्रस्य आन्तरिक-व्यवस्थायां शान्तेः संस्थापनार्थाय हिंसानिरोध एव प्रतिपादनीयो विचारकैः 'अहिंसा परमो धर्मः' इत्यनुसारेण । परन्तु तदर्थं हिंसा आश्रीयते प्रशासनेन।

वास्तविकदृष्ट्या हिंसा तु स्वाभाविकी, परन्तु, अहिंसा च मानवसंस्कृतेः सर्वोत्तमा निष्पत्तिरिति नात्र संशयः। अहिंसाया उदात्ततमं रूपं विश्वात्मकं प्रेमैव भवति। सा सर्वैः सुसंस्कृतजनैः सामान्यतया सदैव ग्राह्या। किन्तु यदा हिंसयैवात्मरक्षा, देशरक्षा, संस्कृति-रक्षा वा सम्भवति, तदा अहिंसा परमो धर्मः इति सापवादं वाच्यम्।

अभ्यास के प्रश्न (४)

निम्नलिखित गद्यांश का संक्षेपण करें:

पुस्तकालयः नवीनानां सिद्धान्तानां जन्मस्थलं भवति। लेखका युगप्रवर्त्तका विचारकाश्च पुस्तकालयेषु स्वजीवनस्य बहुमूल्यं कालं नीत्वा तथाविधं साहित्यं चिन्तनं च प्रास्तुवन् यत् देशे देशे प्रसिद्धिमाप। समाजवादी विचारकः कार्लमार्क्सः नाम लन्दनपुस्तकालये ज्ञानराशिमालोड्य प्रसिद्धं समाजवादमतं निरूप्य प्रसिद्धिमगात्।

भारते वर्षे नालन्दाविश्वविद्यालयस्य ग्रन्थागारोऽतीव विशालः सर्वशास्त्रग्रन्थान् दधार। देशाद् देशान्तरेभ्यश्च विद्वांसः तत्रागत्य ज्ञानं प्रापुः । बहूनि वर्षाणि अतीत्य अयं सर्वनाशकारिभिराक्रामकैः अग्निसात्कृतः। एवमेव प्राचीनकाले नाना ग्रन्थागाराः अग्निशरणं प्रेषिताः, स्वयं वा नाशं गता संसारस्य विभिन्नेषु देशेषु। अस्माकं देशे ग्रन्थरक्षणे जैनानां विशिष्टं योगदानं विद्यते यतः जैनगृहस्थाः श्रमणेभ्यो पुस्तकदानं बहुकल्याणकरममन्यन्त। अद्यापि हस्तलेखरूपाः ग्रन्थाः पुस्तकालयेषु सर्वजनहिताय संकलिताः दृश्यन्ते।

पुस्तकालयश्च इतिहासावबोधे, वर्त्तमानस्य ज्ञाने, भविष्यतश्च दिशानिर्देशे भवत्येव साधनीभूतः। यतः सर्वविधानि साहित्यजातानि तत्र संकलितानि लभ्यन्ते। पाठकाः यथारुचि तत्तत्पुस्तकानामनुशीलनं कर्तुमर्हन्ति। अस्माकं सर्वेषां ज्ञानात्मकानि लक्ष्याणि साधयितुं पुस्तकालयः सर्वथा प्रेरको भवति।

अभ्यास के प्रश्न (५)

निम्नलिखित गद्यांश का संक्षेपण करें:

दुःखसुखचक्रमारूढः अयं संसारः। शरीरिणं कदाचिद् दुःखम् अनुबध्नाति, कदाचित् सुखम्। जगतीह विधात्रा मृत्युपर्यन्तं केवलं दुःखं सोढुं नादिष्टः, सुखमपि जीवने लभ्यते। दुःखसुखसहितं सर्वविश्वजातम्। यदि जीवं दुःखमनुसरति तदा सुखमपि तं वृणुते। क्षणे क्षणे विश्वचत्वरे या घटना भवति, सा अवश्यमेव नूतनत्वमलौकिकत्वं च शंसति। चिराय न कस्यापि वस्तुनो विद्यमानता। योऽद्य रुक्मभूषितं शयनमधिशेते तं प्राप्तसम्पदालोकं लोको नमस्करोति । स एव काले कालेनाक्रान्तो भूत्वा चेखिद्यते, परैः वितीर्णाम् वृत्तिं भुङ्क्ते वा। योऽद्य नानाकष्टापन्नो विगतविभवः अधिगतपराभवश्च वर्तते, स एव आनुकूल्यं प्राप्ते कष्टोदधिं तीर्त्वा धनं कीर्तिं च प्राप्नोति।

अभ्यास के प्रश्न (६)

निम्नलिखित गद्यांश का संक्षेपण करें:

'क्लेशं विना मनुष्यजीवनं निरर्थकमपूर्णं च इति वदन्ति महात्मानो गान्धि-टालस्टाय-प्रमुखा मनीषिणः। सुखं दुःखं चास्माकं जीवने समं गौरवपदमर्हतः। दुःखमनिच्छन् केवलं सुखमेवाभिवाञ्छन्नरः भोग्यद्रव्याण्यपहरन् पापभाग् भवति निस्सन्देहम्। क्लेशे ये नवतां न पश्यन्ति पुरुषाः, ते क्वचिच्चौराः भवन्ति, काले काले पराश्रिता उद्योगहीना वा कदापि उन्नतिमुखा न भवन्ति। क्लेशः उद्योगे भवति। उक्तंच 'उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः। इदमेव क्लेशस्य महत्त्वम्।

अस्मिञ्जगति त एव पुरुषा अस्माकं श्रद्धास्पदं भवन्ति, ये नाम जीवनकाले विभिन्नप्रकारान् क्लेशाननुभवन्तः स्वीयेनादम्येन उत्साहेन लोककल्याणाय तदानीन्तनीं लोकरीतिं शासनञ्चातिक्रम्य कारागारे भूमिगृहे वा कालं यापितवन्तः। ते तद्वज्जीवनमेव धन्यं मन्यमानाः, सम्पादयन्तिस्म लोकहितम्। अस्मिन् प्रसङ्गे सुकरातः सविशेषमुल्लेखनीयः विद्यते।

अभ्यास के प्रश्न (७)

निम्नलिखित गद्यांश का संक्षेपण करें:

भारतीयसंस्कृतेरुन्नायकाः सर्वेषां जातिविहीनत्वमेव व्यवस्थितवन्तः। रामानुज-रामानन्द-चैतन्यादयो जन्मना जातेर्निःसारत्वं प्रदर्शितवन्तः। तेषामनुनायिनः विविध ाभ्यः जातिभ्यः समागता दीक्षानन्तरं समाना बभूवुः। सर्ववर्णानां मोक्षस्य निर्वाणस्य वा द्वारमपावृंतिष्ठति।

यावत्कालं वर्णव्यवस्थाया मूलाधारः कर्मेति अमन्यत तावत्कालं सा व्यवस्थावश्यमेव लाभप्रदासीत्।

जन्मना जातौ स्वीकृतायाम् उच्चतरकर्मसु साधारण-जनानां प्रवृत्तिः कथं भवेत् । यदि दुःशीलोऽपि द्विजः पूज्यो, न शूद्रो विजितेन्द्रियः एव लोकधारणा जायेत तर्हि समाजे वैषम्यमेव वर्धेत। जन्माश्रित- जातिव्यवस्थायां स्वीकृतायां विविधवर्णेषु विभिन्नजातिषु च पारस्परिकसाम्यभावः कथं लोककल्याणाय सम्पद्येत।

अभ्यास के प्रश्न (८)

निम्नलिखित गद्यांश का संक्षेपण करें:

समाजवादः प्राधान्येन समाजस्य हितचिन्तनम् उररीकरोति। समाजस्य हितसम्पादनम्, तस्याधिकारसंरक्षणम् तदवाप्तये च कार्यकरणम् समाजवादस्य उद्देश्यम्। समाजवादस्य प्रथमं चिकीर्षितं जगति मुक्तधननिवेशवादस्य (कैपिटलिज्म इत्यस्य) सर्वतोरूपेण समूलोन्मूलनम्। द्वितीयं च मतं तस्य यत् उत्पादनविकासादिकार्येषु समाजस्य कल्याणाय प्रतिस्पध ा-प्रतियोगिता-पद्धतिं विहाय सहकारितापद्धतिः आश्रयणीया। तृतीयं च तस्याभिमतं यत् सर्वेऽप्युद्योगाः राष्ट्रियाः स्युः। उद्योगेषु समाजस्य राष्ट्रस्य वा पूर्णाधिकारः भवेत्। चतुर्थं च तस्याभिमतं यत् सर्वापि उत्पादन-वितरण-व्यवस्था राज्यायत्ता भवेत्। पञ्चमं च तस्याभिमतं यत् सर्वेभ्योऽपि नागरिकेभ्यः समाजसेवाव्यवस्था भवेत्।

समाजवादस्योद्देश्यं विविच्यते चेत् तर्हि स्फुटम् एतदापद्यते यत् समाजवादो जनहितभावनयैव प्रेरितोऽस्ति। समाजवादः समाजे वर्गविभेदं, जातिभेदं, धर्मवैषम्यम्, उच्चावचत्वं, धनिक-निध र्नभेदं च नाङ्गीकरोति। तद्दृष्ट्या सर्वेऽपि लोकाः समानाः। सर्वेषामेव राष्ट्रियसम्पत्तौ प्रकृतिप्रदत्तेषु च वस्तुषु समानाधिकारः। यत्र यत्र उच्चावचत्वं आर्थिकभेदोऽवलोक्यते, तत्र तत्र स्वार्थसिद्धिमूलकं